प्रसंगवश:

आलोक मेहता

'लाड़ले' बड़े प्यारे पर 'चाबी' किनारे

मुझे 'नाना' पुकारे जाने पर ज्यादा अच्छा नहीं लगता। सुनकर थोड़ा डर लगने लगता है। घर-परिवार और बाहर भी मुझे बूढ़ा समझा जाने लगेगा। पुकारे जाने से अधिक समस्या मानसिकता की होती है। पांचों सीढ़ियां चढ़ने, देर रात तक काम करने, बिना चश्मे के पढ़ने, मिष्ठान्न और अच्छे पकवान खाने, लंबी यात्राएं करने इत्यादि पर कठिनाई तो महसूस नहीं होती। घर-बाहर-दफ्तर में उम्र का ख्याल कर अधिक बोलने व कामकाज में हस्तक्षेप पर अंकुश तो नहीं लगेगा। यह तो हुई दिमाग की बात। दिल क्या कहता है – छोटे बच्चों को देखकर मन खुश होता है। उनके लालन-सुखी और संपन्न होने का आशीर्वाद देने से खून बढ़ जाता है। अपने से कम आयु वाले युवा साथियों के अधिकाधिक सफल होने की कामना करने से मन प्रसन्न हो जाता है लेकिन जब निर्णय लेने होते हैं तो घर हो या बाहर, दिल और दिमाग चाहता यही है कि मेरी बात स्वीकारी जाए। बचपन से अपनी डिक्शनरी में 'नो' न रखने के सिद्धांत से आदत बिगड़ चुकी है। उम्र के इस पड़ाव पर तो जिद्दीपन बढ़ जाता है। फिर भी घर-परिवार, दफ्तर में कम उम्र के बच्चों-युवाओं पर निर्भरता भी बढ़ गई है। अत्याधुनिक मोबाइल, लैपटॉप, हाई-फाई टी.वी. या कार, लंबी यात्राओं की सुविधाजनक बुकिंग, नेट बैंकिंग या बड़ी खरीद-फरोख्त और अस्वस्थ होने पर उन्हीं बच्चों-युवाओं पर पूरी तरह निर्भर होना पड़ता है।

आप सोच रहे होंगे, इन बातों में नया क्या है? मेरे जैसे हजारों-लाखों लोग ऐसे ही सोचते होंगे। इन बातों को पढ़वाने का क्या मतलब है। क्षमा कीजिए, मतलब की बात पर आगे आ रहा हूं। अपनी व्यथा-कथा नहीं सुनाकर देश के बुजुर्ग भाग्य विधाताओं की चर्चा करने लगता तो मुझे भी भाषण सुनना पड़ता। अंतिम प्रसंग यह है कि महान भारत के महान परंपरावादी शक्तिशाली राजनीतिक दलों के हर समारोह-सम्मेलन में 'गांधी-नेहरू युग' की तरह लंबी चौड़ी तकरीरें होती हैं – युवाओं को आगे लाया जाए। युवा नेतृत्व संभाले। अंतिम युवाओं के हाथों में है लेकिन तकरीर के बाद व्यवहार भिन्न हो जाता है।

अब हिंदू परंपरा और संस्कृति पर सर्वाधिक जोर देने वाली भारतीय जनता पार्टी का परिवार ही देख लें। संन्यास और वानप्रस्थ की हिंदू परंपरा पर गौरव करने वाले संघ-भाजपा में 85 वर्षीय 'दादा' लालकृष्ण आडवाणी देश का नेतृत्व किसी अन्य को सौंपने की बात करने और सुनने को तैयार नहीं हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अनुशासित स्वयंसेवक और प्रचारक के रूप में जीवनभर परिवार, त्याग-तपस्या, निःस्वार्थ भाव का पाठ पढ़ने-पढ़ाने के बावजूद संघ परिवार की सदिच्छा-सलाह का पालन उन्हें रास नहीं आ रहा। संघ और भाजपा के नेता पिछले कुछ वर्षों से लगातार आग्रह कर रहे हैं कि उन्हें भाजपा के मार्गदर्शक की भूमिका निभाकर उसकी सफलता के साथ नए नेतृत्व को प्रधानमंत्री के रूप में आगे बढ़ाना चाहिए। यदि 2009 में भाजपा अपने सहयोगियों के साथ चुनाव में विजयी हो जाती तो संभवतः पार्टी उन्हें प्रधानमंत्री बना ही देती लेकिन 2004 और 2009 में उनका कोई चमत्कार नहीं हुआ तो वह मार्गदर्शक की भूमिका ही स्वीकार कर लें। फिर पार्टी में श्रीमती सुषमा स्वराज, नरेंद्र मोदी, नितिन गडकरी, अरुण जेटली तो उन्हीं की छत्रछाया में शीर्ष स्तर पर पहुंचे हैं। भाजपा की दुर्दशा पर सार्वजनिक रूप से आंसू बहाते हुए लंबी टिप्पणी लिखने के साथ 95 वर्षीय ए.के. हंगल के आज भी पर्दे पर अभिनय की गुंजाइश के दावे पर ध्यान दिलाने का क्या अर्थ दुनिया नहीं समझती? उन्हें एन.डी.ए. का नेतृत्व मिला हुआ है और भाजपाई नेता भी प्रकट रूप से उनका सम्मान करते हैं। फिर क्या वह अटलजी की तरह लोकप्रिय वक्ता और वोट कैचर माने जा सके हैं? 'अयोध्या कांड' से पहले लोकसभा की एक सीट जीत पाना उनके लिए कठिन होता था। बाद में भी प्रादेशिक क्षत्रपों और स्थानीय स्वयंसेवकों के बल पर ही उन्हें चुनावी सफलता मिली। जब उन्हें 'भीष्म पितामह' और 'दादा' का संबोधन भाता है तो सिंहासन किसी लक्ष्मीबाई, युधिष्ठिर या दुर्योधन को सौंपने में परेशानी क्यों होनी चाहिए?

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह

लालकृष्ण आडवाणी

भारतीय परंपरा के साथ नेहरू परंपरा और परिवार पर गौरव करने वाली कांग्रेस पार्टी की स्थिति भी कमोबेश यही है। 80 वर्षीय प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह लगातार 21 वर्षों तक राज्यसभा को सुशोभित कर 5 साल वित्त मंत्री और फिर 8 साल लगातार प्रधानमंत्री रहकर एक रिकॉर्ड बना चुके हैं। पिछले महीनों के दौरान कांग्रेस पार्टी में उनकी प्रशासनिक शैली और केवल अपने बचाव की राजनीति को लेकर बड़ी बेचैनी देखने को मिलती रही है। उनकी ईमानदारी, योग्यता और निष्ठा पर कभी किसी ने आशंका नहीं की लेकिन नामी अर्थशास्त्री रहते हुए देश की बिगड़ती आर्थिक स्थिति तथा स्वयं ईमानदार रहते हुए भ्रष्टाचार के मुद्दे पर सरकार की भारी बदनामी देखते हुए क्या उन्हें स्वयं नेतृत्व की कमान राहुल गांधी या किसी अन्य योग्य सहयोगी को सौंपने की पेशकश नहीं करनी चाहिए? एक तरफ दुष्प्रचार यह होता है कि सारे फैसले 10 जनपथ में होते हैं और भोले-भाले प्रधानमंत्री केवल निर्देशों का पालन करते हैं, जबकि वह स्वयं इस बात को ठुकरा चुके हैं। यही नहीं, असलियत यह है कि सरकार के कामकाज और निर्णयों में 10 जनपथ की भूमिका 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होती। अभी 4 जून को हुई कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक में कई वरिष्ठ नेताओं ने यह मुद्दा उठाया कि प्रधानमंत्री की बात तो दूर रही, केंद्रीय मंत्रियों तक उनकी पहुंच नहीं हो पाती। बहरहाल, यह कांग्रेस पार्टी का अपना अंतर्द्वंद्व हो सकता है। अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, जापान ही नहीं, अब तो चीन और रूस जैसे देशों में भी बुजुर्गों की अपेक्षा युवा नेतृत्व सत्ता में आ रहा है लेकिन भारत की सत्तारूढ़ पार्टियों में 'लाड़लों' पर स्नेह की बरसात तो की जाती है, उन्हें राजनीतिक तिजोरी की 'चाबी' सौंपने को कोई तैयार नहीं होता। इस बात को क्यों भुला दिया जाता है कि महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, सरदार वल्लभ भाई पटेल, जवाहरलाल नेहरू, लालबहादुर शास्त्री, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, दीनदयाल उपाध्याय और अटल बिहारी वाजपेयी ने भी युवाकाल में अपनी पार्टियों, समाज और देश को नई दिशा तथा ताकत दी। एक समय और उम्र के बाद राजनीतिक मोह-माया छोड़ने में क्या हर्ज है? इससे क्या बुजुर्ग नेताओं का कद और सम्मान नहीं बढ़ेगा?

alokmehta@nationalduniya.com